महाराष्ट्र राज्य द्वारा सीबीआई

बनाम

विक्रम अनंत दोशी और अन्य

(आपराधिक अपील संख्या 2048/2014)

सितंबर 19,2014

[दीपक मिश्रा और विक्रमजीत सेन, जेजे.]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: धारा 482 - कार्यवाहियों को अपास्त करना - अभियुक्तों द्वारा समर्थित फर्जी कंपनियों के पक्ष में बैंकों द्वारा जारी किए गए क्रेडिट पत्र और इन बैंकों से धन निकालने के लिए उक्त एलसी का उपयोग - धारा 420, 406 आईपीसी के तहत अपराध के लिए आरोप पत्र - ऋणों के भुगतान से विवाद का निस्तारण - उच्च न्यायालय ने कार्यवाही अपास्त कर दी - अभिनिर्धारित: कथित अपराध सामाजिक रूप से गलत था जिसका सामाजिक प्रभाव बहुत अधिक था - न्यायालय का मुख्य कर्तव्य आरोपों की गंभीरता और समझौते की जड़ का पता लगाने के लिए संपूर्ण तथ्यों की जांच करना होना चाहिए - रद्दीकरण न तो न्याय के उद्देश्य को सुरक्षित करने में मदद करेगा, न ही न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकेगा और न ही यह भी कहा जा सकता है कि चूंकि समझौता हो जाएगा तो कोई साक्ष्य रिकॉर्ड पर नहीं आएगा और दोषसिद्धि की संभावना बहुत कम होगी - उच्च न्यायालय का आदेश पूरी तरह से अक्षम्य है - दंड संहिता, 1860 - धाराएँ 420, 406.

न्यायालय ने अपील को स्वीकार करते हुए अभिनिर्धारित किया:,

इस तरीके से राष्ट्रीयकृत बैंक से धन का लाभ उठाना, जैसा कि जांच एजेंसी द्वारा आरोप लगाया गया है, राजकोषीय अशुद्धता और एक तरह से वित्तीय धोखाधड़ी को स्पष्ट रूप से उजागर करता है। आरोप-पत्र में वर्णित कार्यप्रणाली को किसी व्यक्ति

या व्यक्तिगत गलती के दायरे में नहीं रखा जा सकता है। यह एक सामाजिक गलती है और इसका सामाजिक प्रभाव बहुत अधिक है। वित्त से निपटने का यह एक स्वीकृत सिद्धांत है कि जब भी इस तरह के लाभों का लाभ उठाने के लिए हेरफेर और चतुराई से कल्पना की जाती है तो इसे अत्यधिक और प्रमुख रूप से नागरिक चरित्र वाले मामले के रूप में नहीं माना जा सकता है। अपराध की गंभीरता देश की अर्षित रीढ़ पर आघात करती है यह ऐसा मामला नहीं है, जहाँ कोई राशि का भुगतान कर सकता है और "अदेयता प्रमाण पत्र" प्राप्त कर सकता है और हाइपोस्टैसिस पर आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने का लाभ उठा सकता है कि अब और कुछ नहीं किया जाना बाकी है। जिस सामूहिक हित के लिए न्यायालय संरक्षक है, वह कार्यवाही को वापस लेने की अनुमति देने के लिए मूक या मूक दर्शक नहीं हो सकता है, या उस मामले के लिए संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत या संहिता की खंड 482 के तहत अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने और कार्यवाही को अपास्त करने के लिए अभियुक्त व्यक्तियों की सरल निपुणता को स्वीकार नहीं कर सकता है। यह कानूनी रूप से स्वीकार्य नहीं है। उम्मीद की जाती है कि न्यायालय इस तरह के कुशल कदमों से सावधान रहेगा। हम विनम्रतापूर्वक याद दिलाते हैं कि उच्च न्यायालय को इस मामले को इस बात को ध्यान में रखते हुए निपटना चाहिए था कि इस तरह के मुकदमों में अभियुक्त जब सफलता की एक छोटी सी झलक महसूस करता है, तो आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने के लिए सहज रूप से निहित अधिकार क्षेत्र क्षेत्र का आह्वान करता है। न्यायालय का प्रमुख कर्तव्य, उस समय, आरोपों के जोर और समझौते के सार का पता लगाने के लिए पूरे तथ्यों की जांच करना होना चाहिए। यह न्यायाधीश का अनुभव उसकी सहायता के लिए आता है और उक्त अनुभव का उपयोग सतर्कता, सावधानी, सावधानी और साहसी विवेक के साथ किया जाना चाहिए। जैसा कि हम मामले में पाते हैं कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने तथ्यों के पूरे परिप्रेक्ष्य की उचित परिप्रेक्ष्य में जांच करने के लिए बहुत मेहनत नहीं की है और आपराधिक कार्यवाही को अपास्त कर दिया है।

उक्त निरस्तीकरण न तो न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने में मदद करता है और न ही यह न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकता है और न ही यह कहा जा सकता है कि चूंकि कोई समझौता है, इसलिए कोई सबूत रिकॉर्ड पर नहीं आएगा और दोषसिद्धि की बहुत कम संभावना होगी। हमारे विचार में इस तरह के निष्कर्ष को दर्ज करना मुश्किल होगा। [पैरा 23] [524 ई-एच; 525-ए-जी]

ज्ञान सिंह बनाम पंजाब राज्य और अन्य (2012) 10 एससीसी 303; नरिंदर सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य 2014 (4) स्केल 195-निर्भरता।

मदन मोहन अब्बोट बनाम पंजाब राज्य (2008) 4 एससीसी 582: 2008 (5) एससीआर 526; रूमी धर बनाम डब्ल्यू.बी.राज्य (2009) 6 एससीसी 364: 2009 (5) एससीआर 553; केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम डंकन्स एग्रो (1996) 5 एससीसी 591: 1996 (3) 677: 2008 (12) एससीआर 236; केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम ए.रविशंकर प्रसाद और अन्य (2009) 6 एससीसी 351; डिम्पी गुजराल बनाम केंद्र शासित प्रदेश द्वारा प्रशासक एआईआर 2012 एससीडब्ल्यू 5333; राजस्थान राज्य बनाम शंभू केवट 2013 (14) स्केल 235; सीबीआई, एसीबी बनाम नरेंद्र लाल जैन और अन्य 2014 स्केल 137; गोपकुमार बी. नायर बनाम सीबीआई और अन्य 2014 4 स्केल 659; केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम जगजीत सिंह (2013) 10 एससीसी 686 - संदर्भित किया गया।

मामला कानून संदर्भः

2008 (5) एससीआर 526	संदर्भित	पैरा 10
2009 (5) एससीआर 553	संदर्भित	पैरा 14
1996 (3) पूरक एससीआर 360	संदर्भित	पैरा 14
2008 (12) एससीआर 236	संदर्भित	पैरा 14

(2009) 6 एससीसी 351	संदर्भित	पैरा 15
(2012) 10 एससीसी 303	भरोसा किया गया	पैरा 16
2014 (4) स्केल 195	भरोसा किया गया	पैरा 17
एआईआर 2012 एससीडब्ल्यू 5333	संदर्भित	पैरा 17
2013 (14) स्केल 235	संदर्भित	पैरा 17
2014 स्केल 137	संदर्भित	पैरा 18
2014 4 स्केल 659	संदर्भित	पैरा 19
(2013) 10 एससीसी 686	संदर्भित	पैरा 22

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 2048/2014

बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा आपराधिक आवेदन संख्या 2239/2009 में पारित निर्णय और आदेश दिनांक 22.04.2010 से उत्पन्न।

पिंकी आनंद, एएसजी, पी.के. डे, टी.ए. खान, एस.टी. अहमद, बी.वी. बलराम दास, अरविंद कुमार शर्मा, अपीलार्थी की ओर से।

अरुणाभ चौधरी, अनुपम लाल दास, वैभव तोमर, कर्मा दोरजी, प्रत्यर्थियों की ओर से।

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति.दीपक मिश्रा, इनके द्वारा दिया गया-

1. केन्द्रपसारक मुद्दा जो आश्चर्यजनक रूप से उभरता है, न्यायिक विवेक को परिशुद्धता के उचित मानदंड के साथ विचार करने और विचार करने का आदेश देता है, इस बात पर विचार करने के लिए कि एक वरिष्ठ न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 482 या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उसे दी गई अपनी निहित क्षेत्राधिकार का उपयोग करते हुए तथ्यात्मक स्कोर का विश्लेषण करने के लिए केवल इस आधार पर आगे बढ़ना चाहिए कि पक्षों ने एक समझौता किया है और इसलिए,

आपराधिक कार्यवाही जारी रखना निरर्थकता में एक अभ्यास होगा, या न्यायाधीश का पर्याप्त कारण पक्षकारों को अनावश्यक मुकदमेबाजी से मुक्त करने के लिए इस तरह के अपास्त करने की गारंटी देता है, निश्चित रूप से कुछ सवारियों के साथ प्रणाली को निष्फल अभियोजन के साथ लोड नहीं करने के कल्पित आदर्श वाक्य के साथ, जिनमें से एक है। हमने जो प्राथमिक प्रश्न उठाया है, उसमें एक महत्वपूर्ण पूरक मुद्दा है। अर्थात्, क्या न्यायालयों को राजकोषीय शुद्धता के चश्मे से पूरी तरह से अनजान रहना चाहिए और औद्योगिक उद्यमियों या उधारकर्ताओं की ओर से, जैसा कि अभियोजन पक्ष द्वारा आरोप लगाया गया है कि सार्वजनिक वित्तीय संस्थानों को धन का भुगतान किया गया है, गलत तरीके से अपनाई गई कार्यप्रणाली को पूरी तरह से दरकिनार कर देना चाहिए। हम विशेष रूप से हस्तगत मामले में प्राप्त करने वाले तथ्यात्मक मैट्रिक्स को ध्यान में रखते हुए नहीं सोचते हैं।

2. वर्तमान में तथ्यात्मक व्याख्या के लिए। मुख्य सतर्कता अधिकारी, बैंक ऑफ बड़ौदा की लिखित शिकायत के आधार पर प्रत्यर्थी के खिलाफ 6.1.2006 को मामला दर्ज किया गया था और अन्वेषण पूरी होने के बाद विशेष न्यायालय, सीबीआई मामले, मुंबई के समक्ष एक रिपोर्ट दायर की गई थी, जिसमें आरोप पत्र को विद्वत मजिस्ट्रेट को भेजने का अनुरोध किया गया था, जो अपराधों का संज्ञान लेने में सक्षम थे क्योंकि संबंधित बैंक अधिकारी, एक लोक सेवक, आर.सी.शर्मा की संलिप्तता, विचाराधीन अपराध में, अन्वेषण के दौरान प्रथमदृष्टया नहीं पाई जा सकी। चूंकि तथ्य स्पस्ट नहीं थे, इसलिए 3.2.2006 को आरोप-पत्र के अवलोकन के बाद विशेष न्यायाधीश सीबीआई मामले ने उपयुक्त न्यायालय के समक्ष आरोप-पत्र रखने का निर्देश दिया और तदनुसार एसीएमएम, 19वीं अदालत, एस्प्लेनेड, मुंबई के समक्ष अपराध मामला संख्या 82/सीपीडब्ल्यू/2006 एक नया आरोप-पत्र अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ भा.दं.सं. की धारा 120-बी, धारा 406, 20, 467, 468 और 471 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए दायर किया गया।

3. आरोप-पत्र के अवलोकन पर, यह स्पष्ट है कि इस साबित करने लायक है कि इस आशय के आरोप हैं कि विक्रम दोशी, ए 1, विनीत दोशी, ए 2 और संजय जे. शाह, ए 3 ने विभिन्न ऋण सुविधाओं की मंजूरी के लिए बैंक ऑफ बड़ौदा को कई आवेदन दिए थे, जिसमें कहा गया था कि वे उक्त बैंक को मौजूदा सदस्यों, अर्थात् यूटीआई. बैंक और फेडरल बैंक को बदलने के लिए एक नए संघ सदस्य के रूप में शामिल करना चाहते थे। उन्होंने उक्त बैंक से बैंकों के संघ द्वारा स्वीकृत कुल कार्यशील पूंजी सुविधा के 15 प्रतिशत को मंजूरी देने का अनुरोध किया, ताकि इतनी राशि यूटीआई बैंक और फेडरल बैंक को हस्तांतरित की जा सके ताकि उक्त दो बैंकों के साथ मौजूदा देनदारियों को लिया जा सके। अन्वेषण के दौरान यह पता चला कि बैंकों के साथ-साथ वित्त संस्थानों के संघ के साथ कंपनी का खाता अत्यधिक अनियमित था और उक्त स्थिति में अभियुक्त व्यक्तियों ने ऋण की मंजूरी के लिए बैंक से संपर्क किया। बैंक को दिए गए आवेदन में अभियुक्त व्यक्तियों ने अपने खिलाफ बकाया राशि से संबंधित तथ्यों को छिपा दिया। इसके बाद, जब मौजूदा संघ के सदस्यों के साथ बकाया स्थिति के बारे में पूछा गया, तो अभियुक्त व्यक्तियों ने जानबूझकर और बैंक ऑफ बड़ौदा को गुमराह करने के आपराधिक आशय से, वास्तविक राशि की तुलना में काफी कम राशि देकर बकाया स्थिति के बारे में गलत बयान दिए।

4. जैसा कि आगे आरोप लगाया गया है, ऋण की राशि 24.01.2003 को महाप्रबंधक श्री के. के. अग्रवाल द्वारा स्वीकृत की गई थी और शाखा को सूचित किया गया था। उक्त सावधि ऋण के नियमों और शर्तों के अनुसार, इसके लिए प्राथमिक प्रतिभूति मौजूदा सावधि ऋण संस्थानों के साथ कंपनी की सावधि परिसंपत्तियों पर बनाया जाने वाला पहला शुल्क था। नकद ऋण और कार्यशील पूंजी मांग ऋण के लिए प्राथमिक शुल्क स्टॉक, व्यापार में स्टॉक, कच्चा माल और पुस्तक ऋण जैसी वर्तमान परिसंपत्तियों का अनुमान था, और इसके अलावा, महत्वपूर्ण नियमों और शर्तों में से एक यह था कि सीसी, डब्ल्यूसीडीएल और सावधि ऋण राशि का भुगतान सीधे यूटीआई

बैंक और फेडरल बैंक के साथ कंपनी के खाते में किया जाना था ताकि देनदारियों के साथ-साथ दोनों बैंकों के साथ गिरवी रखी गई प्रतिभूतियों को भी लिया जा सके। उक्त स्थिति के बावजूद, बैंक ने 29.01.2003 को विचाराधीन कंपनी एटीसीओएम को मंजूरी के बारे में सूचित किया। आरोप-पत्र से यह और सिद्धय होता है कि ए-1 और ए-2 ने व्यक्तिगत देनदारियों से बचने के आशय से एटीसीओएम में ए-3 और एक श्री पराग गांधी को निदेशक बनाया और उक्त व्यक्तियों द्वारा हस्ताक्षरित डिमांड वचन पत्र (डीपीएन) सहित सभी ऋण दस्तावेज प्राप्त किए। मंजूरी के नियम और शर्तें यह थीं कि कुल कार्यशील पूंजी रु.570.00 लाख (रु.114.00 लाख + रु.456.00 लाख) और रु.360.00 लाख का भुगतान सीधे यूटीआई बैंक और फेडरल बैंक को किया जाना था। नतीजतन, सावधि ऋण जारी किया गया और मंजूरी के नियमों और शर्तों के अनुसार भुगतान किया गया। जैसा कि आरोप लगाया गया है, ए-1 ने बैंक को चालू खाते में स्वीकृत कार्यशील पूंजी जारी करने के लिए प्रेरित किया और उक्त खाते से पैसे को बेईमानी से एसबीआई और देना बैंक में उनके अपने खातों में भेज दिया गया, ताकि उन खातों में बकाया देनदारियों को कम किया जा सके। आरोप पत्र के अनुसार, रु.114.00 लाख नकद क्रेडिट (कार्यशील पूंजी का निधि आधारित हिस्सा) और रु.456.00 लाख (कार्यशील पूंजी का मांग आधारित हिस्सा) को 27.03.2003 को चालू खाते में जारी किया गया था। इस प्रकार, चालू खाते में जारी की गई कुल राशि रु.560.00 लाख जिसमें से A-1 ने बेईमानी से रु.352.00 लाख एसबीआई को और लगभग रु.200.00 लाख देना बैंक को, जो संबंधित बैंक के धन को बेईमानी से दुरूपयोग हुआ और जिससे उक्त बैंक को गलत नुकसान हुआ।

5. जैसा कि आरोप-पत्र से स्पष्ट है कि चालू खाते में सीसी और डीएल की निधियों का हस्तांतरण चालू खाते से निधियों को आगे बढ़ाने और सीसी और डब्ल्यूसीडीएल की उक्त निधियों के हस्तांतरण के लिए एक बेईमान इरादे से किया गया था। ए-1 ने चालू खाते के लिए अपने पास उपलब्ध चेक पत्र का उपयोग किया और

"चालू खाता" शब्दों को प्रतिस्थापित किया और उन्हें "नकद क्रेडिट" के साथ प्रतिस्थापित किया। अन्वेषण में यह सामने आया है कि चालू खाते से धनराशि को और अधिक स्थानांतरित करने के लिए, ए-3 एसबीआई और देना बैंक में अपने खाते के पक्ष में बैंकर्स चेक प्राप्त करके "पे योरसेल्फ चेक" जारी करता था। आरोप-पत्र से यह भी अनुभवगम्य है कि हालांकि आरोपी ए-1 और ए-3 को पता था कि उक्त कार्यशील पूंजी को केवल यूटीआई बैंक और फेडरल बैंक की देनदारियों को लेने के उद्देश्य से स्वीकृत किया गया था, फिर भी उन्होंने बेईमानी से धन को एसबीआई और देना बैंक में स्थानांतरित आदेश दिया। जैसा कि आरोप लगाया गया है, स्वीकृत धन का उपयोग उस उद्देश्य के लिए नहीं किया गया था जिसका लाभ उठाया गया था और मंजूरी के नियमों और शर्तों का उल्लंघन किया गया था जिसके परिणामस्वरूप बैंक को अन्य कंसोर्टियम बैंकों के बराबर चार्ज नहीं मिल सका। ए-1 और ए-3 द्वारा निधियों के कथित विचलन से बैंक को उसकी सुरक्षा से वंचित कर दिया गया और पूरा ऋण असुरक्षित हो गया।

6. अन्वेषण से आगे पता चला कि ए-1 को अभियुक्तों द्वारा समर्थित काल्पनिक कंपनियों के पक्ष में एसबीआई और देना बैंक से क्रेडिट पत्र (इसके बाद "एलसी" के रूप में संदर्भित) जारी किए गए और उक्त एलसी का उपयोग इन बैंकों से धन की हेराफेरी करने के लिए किया गया। एलसी के लाभार्थी फर्म, जिनके पक्ष में ए-2 और ए-3 ने एलसी जारी करने का अनुरोध किया था, वे बिना किसी वाणिज्यिक गतिविधि के केवल कागज पर मौजूद कंपनियां थीं। उक्त काल्पनिक कंपनियों ने अपने फर्जी बिलों को संलग्न करके एलसी पर छूट प्राप्त की और इन छूट आय के एक हिस्से का उपयोग ए-1 के व्यक्तिगत लाभ के लिए किया गया और एक निश्चित हिस्से को एटीसीओएम को वापस भेज दिया गया। नियत तारीखों पर, एटीसीओएम ने एसबीआई और देना बैंक के साथ अपनी देनदारियों का भुगतान नहीं किया। आरोप-पत्र में काल्पनिक कंपनियों के नामों का विवरण दिया गया है। उक्त सूची में 10 कंपनियां

शामिल हैं। आरोप-पत्र में आगे यह उल्लेख किया गया है कि इन काल्पनिक कंपनियों के मालिकों/निदेशकों ने अपने हस्ताक्षर के तहत झूठे बिल जारी किए थे और कनकरंजन जैन के कहने पर एलसी द्वारा समर्थित इन झूठे बिलों को छूट देने वाले बैंकों के साथ छूट दी थी। इनमें से कुछ मालिक/निदेशक उक्त कनकरंजन जैन के कर्मचारी और घरेलू कर्मचारी हैं।

7. ऐसा कहने के बाद आरोप पत्र इस प्रकार आगे बढ़ता हैः

"कि, इनमें से दो काल्पनिक कंपनियों में, अर्थात्, मैसर्स एनीव इलेक्ट्रॉनिक्स एंड मैसर्स कोवेट सिक्योरिटीज, श्री विक्रम दोशी (ए-1) और श्री विनीत जोशी (ए-2) कुछ समय के लिए निदेशक थे। ये दोनों कंपनियाँ यूनाइटेड वेस्टर्न बैंक में अपने खाते संधारित कर रही थीं। श्री विक्रम दोशी (ए-1) का भी उसी बैंक में अपना निजी खाता था। इन दोनों खातों से श्री विक्रम दोशी को रुपये 1,48,50,000- की राशि मिली थी। इस राशि का उपयोग उन्होंने आवासीय फ्लैट खरीदने के लिए किया था। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अभियुक्त व्यक्तियों ने व्यावसायिक आवश्यकताओं की आड़ में बैंक से ऋण सुविधाएं प्राप्त की थीं, लेकिन व्यक्तिगत उपयोग के लिए अचल संपत्ति प्राप्त करने के लिए धन का उपयोग किया था। इस तरह के अवैध कृत्यों के कारण उत्पन्न देयता को समाप्त करने के लिए, उन्होंने बैंक ऑफ बड़ौदा को ऋण सुविधाओं को मंजूरी देने के लिए प्रेरित किया था, जिसका उपयोग उनके द्वारा बेईमानी से किया गया था। बैंक ऑफ बड़ौदा द्वारा स्वीकृत और जारी की गई पूरी राशि बकाया है और कुछ भी नहीं चुकाया गया है। अभियुक्तों के कृत्यों के कारण, बैंक ऑफ बड़ौदा द्वारा स्वीकृत सुविधाओं को बिना किसी प्रतिभूति के प्रदान किया जाता है और इस प्रकार बैंक को गलत नुकसान हुआ है।"

8. 30 मार्च 2009 को विचारण न्यायालय के समक्ष मामले की विचाराधीनता रहने के दौरान सूचना देने वाले बैंक ऑफ बड़ौदा ने अपने ऋण को कोटक महिंद्रा बैंक

के नियंत्रण में एक ट्रस्ट आईएआरसी -बीओबी-01-07 को हस्तांतरित कर दिया था। अभियुक्त विक्रम दोशी ने विवादों को सुलझा लिया और विवाद को निपटाने के लिए 42 लाख रुपये का भुगतान किया। उस आधार पर, कोटक महिंद्रा बैंक ने मैसर्स एटकॉम टेक्नोलॉजी लिमिटेड को एक "अदेयता प्रमाण पत्र" जारी किया जिसमें कहा गया था कि बैंक ऑफ बड़ौदा द्वारा दी गई सुविधा के संबंध में 42 लाख रुपये की प्राप्ति पर उनके द्वारा कोई राशि बकाया और देय नहीं थी। उक्त बैंक ने यह भी पुष्टि की कि विक्रम दोशी द्वारा जारी की गई गारंटी का भुगतान कर दिया गया है।

9. इस तरह के "अदेयता प्रमाण पत्र" की प्राप्ति के बाद प्रत्यर्थी ने सीआरपीसी की धारा 482 के तहत बॉम्बे उच्च न्यायालय के समक्ष आपराधिक आवेदन संख्या 2239/2009 एक याचिका दायर की और विद्वान एकल न्यायाधीश ने दिनांक 24.2.2010 के आदेश के तहत विद्वान अतिरिक्त मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट के समक्ष लंबित आपराधिक कार्यवाही को अपास्त कर दिया। विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपने पहले के आदेशों में से एक का उल्लेख किया और इस प्रकार निर्णय दिया: -

“धारा 406 और 420 के तहत दोनों अपराध न्यायालय की अनुमति से शमनीय हैं। जैसा कि पहले ही यहां चर्चा की गई है, बैंक पहले ही उधारकर्ता यानी एटीसीओएम को अपना अदेयता प्रमाण पत्र दे चुका है। यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि भले ही मामले को विचारण के लिए जाने की अनुमति दी जाए, लेकिन आपराधिक न्यायालयों पर बोझ डालने के अलावा कोई सार्थक उद्देश्य पूरा नहीं होगा, जो पहले से ही अत्यधिक बोझ से दबे हुए हैं।”

10. उसी निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए उच्च न्यायालय ने मदन मोहन मठाधीश बनाम पंजाब राज्य[(1)] के निर्णय पर भरोसा किया और ए. रविशंकर प्रसाद (ऊपर) में दिए गए निर्णय को विशिष्ठ किया।

11. हमने सुश्री पिंकी आनंद, विद्वान एएसजी और श्री पी.के.डे, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के विद्वान अधिवक्ता और अरुणाभ चौधरी और श्री अनुपम लाल दास को प्रत्यर्थी की ओर से सुना है।

12.उपरोक्त तथ्यों की पृष्ठभूमि में जो मूल प्रश्न उत्पन्न होता है वह यह है कि क्या प्राप्त करने वाले तथ्यात्मक मैट्रिक्स में उच्च न्यायालय आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने में उचित है। अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि उच्च न्यायालय ने गलती से राय दी है कि शेष अपराध भा.दं.सं. की धारा 406 और 420 हैं जबकि आरोप पत्र में अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ अन्य अपराध भी शामिल हैं। यह आगे तर्क दिया जाता है कि लोक अधिकारी के खिलाफ आरोप पत्र दायर नहीं किया गया था क्योंकि अन्वेषण के दौरान लोक अधिकारी के खिलाफ आरोप की पुष्टि नहीं की जा सकी थी और उच्च न्यायालय ने अन्य अपराधों की गंभीरता को समझे बिना कार्यवाही को अपास्त कर दिया है जो आदेश को कानून में आत्यन्तिक रूप से कमजोर बनाता है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता का तर्क होगा कि जब बैंक से "अदेयता प्रमाण पत्र" प्राप्त नहीं किया गया था और मामले का निस्तारण किया गया था, तो उच्च न्यायालय ने कार्यवाही को सही ढंग से अपास्त कर दिया था और इसलिए, यह किसी भी हस्तक्षेप की गारंटी नहीं देता है।

13. इस मोड़ पर, हम यह कहने के लिए बाध्य हैं कि जब उच्च न्यायालय ने निर्णय लिया, तो मुद्दा यह था कि क्या गैर-शमनीय अपराधों के संबंध में निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए किसी कार्यवाही को अपास्त किया जा सकता है और उस संबंध में कानून का सिद्धांत निश्चितता की स्थिति में नहीं था। उक्त स्थिति इस न्यायालय द्वारा स्पष्ट की गई है कि उच्च न्यायालय के पास अपराधों की कुछ प्रकृति को छोड़कर गैर-शमनीय अपराधों के संबंध में संहिता की धारा 482 के तहत आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने का अधिकार क्षेत्र है।

14. उचित परिप्रेक्ष्य में पूरी तस्वीर की सराहना करने के लिए हमें लगता है कि यह क्षेत्र में प्रासंगिक निर्णयों को संदर्भित करता प्रतीत होता है। रूमी धर बनाम पश्चिम बंगाल राज्य [(2)] में विद्वान विशेष न्यायाधीश द्वारा संहिता की धारा 239 के तहत अभियुक्त को आरोप मुक्त करने से इनकार करने के आदेश पर विचार करते समय, जिसकी उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई है, दो-न्यायाधीशों की खंडपीठ ने केंद्रीय जांच ब्यूरो बनाम डंकन्स एग्रो इंडस्ट्रीज लिमिटेड [(3)] और निखिल मर्चेंट बनाम सी.बी.आई [(4)] में दिए गए फैसले का उल्लेख इस प्रकार किया: -

> "14. यह अब कानून का एक सुस्थापित सिद्धांत है कि किसी दिए गए मामले में, एक सिविल कार्यवाही और एक आपराधिक कार्यवाही एक साथ आगे बढ़ सकती है। बैंक ऋणी को दिए गए ऋण की राशि की वसूली करने का हकदार है। यदि उक्त ऋण प्राप्त करने के संबंध में, बैंक के अधिकारियों सहित अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा आपराधिक अपराध किए गए हैं, तो आपराधिक कार्यवाही भी निर्विवाद रूप से बनाए रखने योग्य होगी।"

उक्त मामले में, न्यायालय ने इस तथ्य पर ध्यान दिया कि ओरिएंटल बैंक ऑफ कॉमर्स और ऋण के पुनर्भुगतान से संबंधित अभियुक्त के बीच किया गया समझौता अभियुक्त को दोषमुक्त करने का आधार नहीं बन सका। दो-न्यायाधीशों की पीठ ने उच्च न्यायालय के समक्ष सी.बी.आई. के इस रुख की सराहना की कि अभियुक्त के खिलाफ आपराधिक मामला न केवल ऋण प्राप्त करने के लिए शुरू किया गया था, बल्कि बैंक अधिकारियों के साथ आपराधिक साजिश के आधार पर भी शुरू किया गया था और तदनुसार उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को बरकरार रखा।

15. केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम ए.रविशंकर प्रसाद और अन्य [(5)] में, न्यायालय उस तथ्य स्थिति पर विचार कर रहा था जिसमें अभियुक्त व्यक्तियों ने जालसाजी,

दस्तावेजों को गढ़ने जैसे अपराध किए थे और उक्त दस्तावेजों का उपयोग वास्तविक के रूप में किया था। आरोप था कि उन्होंने भारी ऋण सुविधाओं का लाभ उठाने के लिए बैंक अधिकारियों के साथ साजिश रची थी। आपराधिक कार्यवाही विचाराधीनता रहने के दौरान, अभियुक्त व्यक्तियों ने 157 करोड़ रुपये की राशि का भुगतान करके बकाया राशि का निपटान किया था और उस आधार पर आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने के लिए संहिता की धारा 482 के तहत एक आवेदन को प्राथमिकता दी और उच्च न्यायालय ने समझौते के आधार पर कार्यवाही को अपास्त कर दिया। यह कहा जा सकता है कि उक्त मामले में विचारण आगे बढ़ गया था और 92 गवाहों को पहले ही परीक्षित कराया जा चुका था। इस न्यायालय के समक्ष यह सवाल उठा कि क्या इस तरह की कार्यवाही को अपास्त कर दिया जाना चाहिए था। न्यायालय ने डंकन्स एग्रो इंडस्ट्रीज लिमिटेड के मामले में निर्णय को विशिष्ठ किया और राय दी कि उसमें निहित भाषा का सार इंगित करता है कि शिकायत को अपास्त करना प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है। न्यायालय ने निखिल मर्चेंट के मामले में भी निर्णय को विशिष्ठ किया।

16. ज्ञान सिंह बनाम पंजाब राज्य और अन्य [(6)] के मामले में तीन-न्यायाधिपतियों की पीठ ने इस संदर्भ का जवाब देते हुए कि क्या उच्च न्यायालय के पास गैर-शमनीय अपराधों के संबंध में कार्यवाही को अपास्त करने के लिए संहिता की धारा 482 के तहत अधिकार क्षेत्र है, कई प्राधिकारों का उल्लेख करने के बाद फैसला सुनाया कि संहिता की धारा 482, जैसा कि इसकी भाषा से पता चलता है, उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति को बचाती है जो न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए एक उच्च न्यायालय होने के कारण है। शब्द, "इस संहिता में कुछ भी नहीं" जिसका अर्थ है कि प्रावधान एक प्रबल प्रावधान है और उक्त शब्द इस बात में कोई संदेह नहीं छोड़ते हैं कि संहिता का कोई भी प्रावधान अंतर्निहित शक्ति को सीमित या प्रतिबंधित नहीं करता

है। पीठ ने आगे कहा कि इस तरह की शक्ति के प्रयोग के लिए दिशानिर्देश धारा 482 में ही प्रदान किया गया है अर्थात किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए और विभिन्न स्थितियों में, अंतर्निहित शक्ति का अपने अंतिम उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए विभिन्न तरीकों से उपयोग किया जा सकता है । उच्च न्यायालय द्वारा दोहरे उद्देश्यों में से किसी एक पर धारा 482 के तहत अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करने से पहले राय का गठन, (i) किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए, या (ii) न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए, एक अनिवार्य शर्त है। न्यायालय ने आगे कहा कि न्याय प्रशासन के दौरान किसी गलती को ठीक करना या अनावश्यक न्यायिक प्रक्रिया को जारी रखने से रोकना उच्च न्यायालय का न्यायिक दायित्व है और पूरे विचार के लिए इस तरह के अभ्यास में कहावत पूर्व डेबिटो जस्टिसिया अंतर्निहित है क्योंकि वास्तविक, पूर्ण और पर्याप्त न्याय करना है जिसके लिए यह मौजूद है।

ऐसा कहने के बाद, तीन-न्यायाधिपतियों की पीठ ने एक अपराधी और पीड़ित के बीच समझौते के आधार पर आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने से संबंधित मुद्दे को संबोधित किया और इस संदर्भ में, उसने इस प्रकार निर्णय दियाः -

> “61. अंतर्निहित शक्ति बिना किसी वैधानिक सीमा के व्यापक है, लेकिन इसका प्रयोग ऐसी शक्ति में निहित दिशानिर्देश के अनुसार किया जाना चाहिए। (i) न्याय के उद्देश्यों को सुनिश्चित करना, या (ii) किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकना। आपराधिक कार्यवाही या शिकायत या एफआईआर को अपास्त करने की शक्ति का प्रयोग किन मामलों में किया जा सकता है जहां अपराधी और पीड़ित ने अपने विवाद का निपटारा कर लिया है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा और कोई श्रेणी निर्धारित

नहीं की जा सकती है। हालांकि, इस तरह की शक्ति का प्रयोग करने से पहले, उच्च न्यायालय को अपराध की प्रकृति और गंभीरता को ध्यान में रखना चाहिए। मानसिक विकृति के जघन्य और गंभीर अपराधों या हत्या, बलात्कार, डकैती आदि जैसे अपराधों को उचित रूप से अपास्त नहीं किया जा सकता है, भले ही पीड़ित या पीड़ित के परिवार और अपराधी ने विवाद को सुलझा लिया हो। इस तरह के अपराध निजी प्रकृति के नहीं होते हैं और इनका समाज पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। इसी तरह, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम या उस क्षमता में काम करते समय लोक सेवकों द्वारा किए गए अपराधों आदि जैसे विशेष कानूनों के तहत अपराधों के संबंध में पीड़ित और अपराधी के बीच कोई समझौता; ऐसे अपराधों से जुड़ी आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने के लिए कोई आधार प्रदान नहीं कर सकता है। लेकिन अत्यधिक और मुख्य रूप से सिविल प्रकृति वाले आपराधिक मामले अपास्त करने के उद्देश्यों के लिए एक अलग स्तर पर खड़े हैं, विशेष रूप से वाणिज्यिक, वित्तीय, व्यापारिक, नागरिक, साझेदारी या इस तरह के लेनदेन या दहेज आदि से संबंधित विवाह से उत्पन्न होने वाले अपराध या पारिवारिक विवाद जहां गलत मूल रूप से निजी या व्यक्तिगत प्रकृति का है और पक्षों ने अपने पूरे विवाद का समाधान कर लिया है। इस श्रेणी के मामलों में, उच्च न्यायालय आपराधिक कार्यवाही को अपास्त कर सकता है यदि उसके विचार में, अपराधी और पीड़ित के बीच समझौते के कारण, दोषसिद्धि की संभावना दूरस्थ और धूमिल है और आपराधिक मामले के जारी रहने से आरोपी को बहुत उत्पीड़न और पूर्वाग्रह का सामना करना पड़ेगा और पीड़ित के साथ पूर्ण और पूर्ण समझौते और समझौते के बावजूद

आपराधिक मामले को अपास्त नहीं करने से उसके साथ अत्यधिक अन्याय होगा।

17.हाल ही में, नरिंदर सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य [(7)] मामले में, दो-न्यायाधिपतियों की खंडपीठ ने ज्ञान सिंह के मामले (सुप्रा) और डिंपी गुजराल बनाम प्रशासक [(8)] के माध्यम से केंद्र शासित प्रदेश के मामले पर भरोसा किया और राजस्थान राज्य बनाम संभु केवट [(9)] के फैसले को अलग किया, और माना कि उक्त मामले के तथ्यों में धारा 307 के तहत कार्यवाही निरस्त किये जाने योग्य है। दो-न्यायाधिपतियों की पीठ ने कुछ दिशानिर्देश निर्धारित किए जिनके द्वारा उच्च न्यायालयों को पक्षों के बीच समझौते को पर्याप्त उपचार देने और समझौते को स्वीकार करते समय और कार्यवाही को अपास्त करने या समझौता स्वीकार करने से इनकार करते समय संहिता की धारा 482 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करने में मार्गदर्शन किया जाएगा। वर्तमान उद्देश्य के लिए प्रासंगिक कुछ दिशानिर्देश नीचे पुन: प्रस्तुत किए गए हैं: -

> "(II) जब पक्षकार समझौता कर लेते हैं और उस आधार पर आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने के लिए याचिका दायर की जाती है, तो ऐसे मामलों में मार्गदर्शक कारक यह सुनिश्चित करना होगाः
>
> ((i) न्याय का उद्देश्य, या
>
> ((ii) किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए।
>
> शक्ति का प्रयोग करते समय उच्च न्यायालय को उपरोक्त दो उद्देश्यों में से किसी एक पर राय बनानी होती है।

(III) ऐसी शक्ति का प्रयोग उन अभियोजनों में नहीं किया जाता है जिनमें मानसिक विकृति के जघन्य और गंभीर अपराध या हत्या, बलात्कार, डकैती आदि जैसे अपराध शामिल हैं। इस तरह के अपराध निजी प्रकृति के नहीं होते हैं और इनका समाज पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। इसी तरह, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम जैसे विशेष अधिनियम के तहत किए गए कथित अपराधों या उस क्षमता में काम करते हुए लोक सेवकों द्वारा किए गए अपराधों को केवल पीड़ित और अपराधी के बीच समझौते के आधार पर अपास्त नहीं किया जाना चाहिए।

(IV) दूसरी ओर, वे आपराधिक मामले जिनमें व्यापक और प्रमुख रूप से नागरिक चरित्र हैं, विशेष रूप से वाणिज्यिक लेनदेन से उत्पन्न होने वाले या वैवाहिक संबंध या पारिवारिक विवादों से उत्पन्न होने वाले मामलों को तब अपास्त कर दिया जाना चाहिए जब पार्टियों ने अपने सभी विवादों को आपस में सुलझा लिया हो।

(V) अपनी शक्तियों का प्रयोग करते समय, उच्च न्यायालय को इस बात की जांच करनी है कि क्या दोषसिद्धि की संभावना दूरस्थ और धूमिल है और आपराधिक मामलों को जारी रखने से आरोपी को बहुत उत्पीड़न और पूर्वाग्रह का सामना करना पड़ेगा और आपराधिक मामलों को अपास्त नहीं करने से उसके साथ अत्यधिक अन्याय होगा।"

18. इस स्तर पर सीबीआई, एसीबी, मुंबई बनाम नरेंद्र लाल जैन और अन्य[(10)] मामले में तीन न्यायाधीशों की पीठ के फैसले पर ध्यान देना उचित है। उक्त मामले में अपराध में अभियुक्तों की दोषीता से संबंधित जांच के दौरान, संबंधित बैंक ने प्रतिवादियों से बकाया राशि की वसूली के लिए वाद दायर किया था और कहा था कि

वादों का निस्तारण सहमति डिक्री के अनुसार किया गया था। उक्त सहमति के आधार पर आरोपमुक्त करने के लिए एक आवेदन दायर किया गया था जिसे विचारण न्यायालय ने खारिज कर दिया था लेकिन अंततः उच्च न्यायालय ने इसकी अनुमति दे दी थी। चाहे यह कहा जाए, निजी पक्षों के खिलाफ विद्वत विचारण न्यायाधीश द्वारा भा.दं.सं. की धारा 120-बी/420 के तहत आरोप तय किए गए थे। जहां तक बैंक अधिकारियों का संबंध है, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के विभिन्न प्रावधानों के तहत आरोप तय किए गए थे। उक्त से असंतुष्ट होने के कारण, सीबीआई ने विशेष अनुमति प्राप्त करके एक अपील को प्राथमिकता दी थी और उस संदर्भ में न्यायालय ने कहा कि आरोपी प्रत्यर्थी पर भा.दं.सं. की धारा 120-बी/420 के तहत आरोप लगाया गया था और राशि का भुगतान करने के लिए प्रत्यर्थी-प्रतिवादी के सिविल दायित्व का पहले ही निस्तारण कर दिया गया था और आगे बैंक की ओर से कोई शिकायत नहीं थी। इस तथ्य पर ध्यान देते हुए कि भा.दं.सं.. की धारा 420 के तहत अपराध शमनीय है और धारा 120-बी शमनीय नहीं है, न्यायालय ने अंततः इस प्रकार राय दीः -

> “11. वर्तमान मामले में, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि बैंक को हुए मौद्रिक नुकसान की भरपाई करने के दायित्व का पक्षकारों के बीच पारस्परिक रूप से निपटारा किया गया था और अभियुक्त ने इस संबंध में दायित्व को स्वीकार कर लिया था, उच्च न्यायालय ने सीआर.पी.सी. की धारा 482 के तहत अपनी शक्ति का उपयोग करना उचित समझा था। हम यह नहीं देखते कि इस तरह के अधिकार के प्रयोग को कैसे दोषपूर्ण या गलत माना जा सकता है। संहिता की धारा 482 उच्च न्यायालय में ऐसा आदेश देने की शक्ति प्रदान करती है जो अन्य बातों के साथ साथ साथ-साथ कानून की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए आवश्यक समझा जा सके। हालांकि सीआर.पी.सी. की धारा 482 के

तहत उपलब्ध शक्ति की रूपरेखा के संबंध में कानून में तय स्थिति को वापस करना या संदर्भित करना पूरी तरह से अनावश्यक होगा. यह याद रखना चाहिए कि एक आपराधिक कार्यवाही का जारी रहना जो दमनकारी होने की संभावना है या एक लंगड़े अभियोजन के चरित्र में भाग ले सकता है, सीआर.पी.सी. की धारा 482 के तहत असाधारण शक्ति का आह्वान करने के लिए अच्छा आधार होगा।"

19. हाल ही में गोपकुमार बी.नायर बनाम सीबीआई और अन्य[(11)] मामले में न्यायालय ने ज्ञान सिंह के मामले के पैराग्राफ 61 को संदर्भित किया, नरेंद्र लाल जैन (ऊपर) में इस तथ्य के संबंध में निर्णय को विशिष्ठ किया कि अभियुक्त व्यक्ति 1988 के अधिनियम की धारा 13(2) सपठित धारा 13(1)(डी) सपठित धारा 120-बी भा.दं.सं. और धारा 420/471 भा.दं.सं. के तहत आरोपों का सामना कर रहे थे और यह अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त-अपीलकर्ता के खिलाफ आरोपों का आधार नरेंद्र लाल जैन (ऊपर) के समान नहीं था, जिसमें आरोपी पर केवल भा.दं.सं. की धारा 420 सपठित धारा 120-बी के तहत आरोप लगाया गया था। ऐसा कहने के बाद न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी कीः -

"अपराध निश्चित रूप से अधिक गंभीर हैं; वे प्रकृति में निजी नहीं हैं। षड्यंत्र का आरोप भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत अपराध कारित करना है। अभियुक्त पर भा.दं.सं. की धारा 471 के तहत मूल अपराध करने का भी आरोप लगाया गया है। यद्यपि देय राशि का भुगतान किया गया है, लेकिन यह पक्षकारों के बीच एक निजी समझौते के तहत है, जबकि निखिल मर्चेंट (ऊपर) और नरेंद्र लाल जैन (ऊपर) में समझौता न्यायालय के आदेश का एक हिस्सा था।

उपरोक्त दो मामलों में समझौता डिक्री की शर्तों के विपरीत अभियुक्त-अपीलार्थी के आपराधिक दायित्व के दोषमुक्त होने की बैंक की ओर से कोई स्वीकृति नहीं है। ऊपर बताए गए तथ्यों की समग्रता में, यदि उच्च न्यायालय ने यह विचार लिया है कि ज्ञान सिंह (उपरोक्त) (पैरा 61) में वर्णित अपवर्जन वर्तमान मामले पर लागू होता है और उस आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि धारा 482 सीआरपीसी के तहत शक्ति का उपयोग अभियुक्त के खिलाफ आपराधिक मामले को अपास्त करने के लिए नहीं किया जाना चाहिए, तो हम उक्त निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई औचित्य नहीं पा सकते हैं।"

20. वर्तमान प्राप्त करने वाले तथ्यात्मक अंक की उपरोक्त प्राधिकारों की अहरण पर सराहना की जानी चाहिए। ज्ञान सिंह (उपरोक्त) में बताए गए सिद्धांतों की अध्ययन जांच पर यह अस्पष्ट है कि तीन-न्यायाधिपतियों की पीठ ने फैसला सुनाया है कि जघन्य और गंभीर अपराधों और भ्रष्टाचार रोकथाम अधिनियम के तहत अपराधों और लोक सेवकों द्वारा उस क्षमता में काम करते हुए किए गए अन्य सभी अपराधों के संबंध में कार्यवाही को अपास्त नहीं किया जाना चाहिए। इसके अलावा, न्यायालय ने समाज पर गंभीर प्रभाव डालने वाले अपराधों पर भी जोर दिया है। यह आगे निर्धारित किया गया है कि अत्यधिक और मुख्य रूप से सिविल प्रकृति वाले आपराधिक मामले, विशेष रूप से वाणिज्यिक, वित्तीय, व्यापारिक, नागरिक साझेदारी या ऐसे लेनदेन या दहेज आदि से संबंधित विवाह से उत्पन्न होने वाले अपराधों से उत्पन्न होने वाले अपराधों को अपास्त करने के उद्देश्यों के लिए एक अलग आधार पर खड़े हैं। या पारिवारिक विवाद जहां गलत मूल रूप से निजी या व्यक्तिगत प्रकृति का है। नरेंद्र लाल जैन (उपरोक्त) मामले में तीन-न्यायाधिपतियों की पीठ ने

कार्यवाही को अपास्त कर दिया क्योंकि निजी प्रत्यर्थी के संबंध में आईपीसी की धारा 120/420 के तहत आरोप लगाए थे। गोपकुमार बी. नायर के मामले में न्यायालय ने नरेंद्र लाल जैन (उपरोक्त) में निर्णय को विशिष्ठ किया और राय दी कि आरोपी पर भा.दं.सं. की धारा 471 के तहत अपराध करने का भी आरोप लगाया गया था और उस आधार पर उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया गया था जिसने आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने से इनकार कर दिया था।

21. हस्तगत मामले में, आरोप पत्र के अनुसार, प्रत्यर्थी ने अपने द्वारा बनाई गई काल्पनिक कंपनियों के पक्ष में बैंक से एलसी जारी किए थे और काल्पनिक लाभार्थी कंपनियों ने अपने फर्जी बिलों को संलग्न करके छूट वाले क्रेडिट पत्र प्राप्त किए थे। आरोप पत्र में 10 काल्पनिक कंपनियों के नामों का उल्लेख किया गया है। इस प्रकार, जालसाजी के आरोप बहुत अधिक हैं। जैसा कि विवादित आदेश से स्पष्ट होता है, विद्वान एकल न्यायाधीश ने इसे स्वीकार नहीं किया है। यह कोई साधारण मामला नहीं है जहां एक आरोपी ने बैंक से पैसे उधार लिए हैं और इसे कहीं और मोड़ दिया है और उसके बाद राशि का भुगतान किया है। यह ऐसी स्थिति को नहीं दर्शाता है जहां एक निजी वित्तीय संस्थान और एक अभियुक्त के बीच लेनदेन होता है, और आपराधिक कार्यवाही शुरू करने के बाद वह राशि का भुगतान करता है और विवाद का निस्तारण करता है। तथ्यों का खुलासा एक अलग कहानी बताता है। जैसा कि सीबीआई के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि जिस तरीके से ऋण पत्र जारी किए गए थे और धन की हेराफेरी की गई थी, उसका आपराधिक कानून में एक आधार है। विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करेंगे कि यह एक ऐसे मामले को चित्रित नहीं करता है जिसमें अत्यधिक और प्रमुख रूप से सिविल प्रकृति हो। आंतरिक चरित्र अलग है। काल्पनिक कंपनियों के निर्माण पर जोर दिया गया है।

22. इस संदर्भ में, हम उपयोगी रूप से केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम जगजीत सिंह[(12)] में दो-न्यायाधीशों की पीठ के फैसले का उल्लेख कर सकते हैं, जिसमें न्यायालय ने सीबीआई द्वारा आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने वाले उच्च न्यायालय के आदेश को पलट दिया था और उस पृष्ठभूमि में इस तथ्य पर ध्यान दिया था कि अभियुक्त व्यक्तियों ने बेईमानी से बैंक की संपत्ति की डिलीवरी के लिए प्रेरित किया था और जाली दस्तावेजों का उपयोग वास्तविक के रूप में किया था। आगे कार्यवाही करते हुए न्यायालय ने निम्नलिखित राय दीः -

> "भा.दं.सं. की धारा 420/471 के तहत अपराधों सहित बैंकिंग गतिविधियों के संबंध में किए गए अपराधों का जनता पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है और समाज के कल्याण के लिए खतरा पैदा करते हैं। ये अपराध लोक सेवकों द्वारा उस क्षमता में काम करते हुए किए गए नैतिक पतन से जुड़े अपराधों की श्रेणी में आते हैं। प्रथमदृष्टया, कोई यह कह सकता है कि ऐसे मामलों में बैंक पीड़ित है, लेकिन वास्तव में, बैंक के ग्राहकों सहित सामान्य रूप से समाज पीड़ित है। वर्तमान मामले में, किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के संबंध में न तो कोई आरोप था और न ही रिकॉर्ड में ऐसा कुछ था जो यह सुझाव देता हो कि अपराधी न्याय के उद्देश्यों के लिए आदेश प्राप्त करने के हकदार थे।"

23. हम उपरोक्त दृष्टिकोण से सम्मानपूर्वक सहमत हैं। यह कहा जा सकता है कि इस तरीके से राष्ट्रीयकृत बैंक से धन का लाभ उठाना, जैसा कि जांच एजेंसी द्वारा आरोप लगाया गया है, राजकोषीय अशुद्धता और एक तरह से वित्तीय धोखाधड़ी को स्पष्ट रूप से उजागर करता है। आरोप-पत्र में वर्णित कार्यप्रणाली को किसी व्यक्ति या व्यक्तिगत गलती के दायरे में नहीं रखा जा

सकता है। यह एक सामाजिक गलती है और इसका सामाजिक प्रभाव बहुत अधिक है। वित्त से निपटने का यह एक स्वीकृत सिद्धांत है कि जब भी इस तरह के लाभों का लाभ उठाने के लिए हेरफेर और चतुराई से कल्पना की जाती है तो इसे अत्यधिक और प्रमुख रूप से नागरिक चरित्र वाले मामले के रूप में नहीं माना जा सकता है। अपराध की गंभीरता देश की अर्षित रीढ़ पर आघात करती है यह ऐसा मामला नहीं है, जहाँ कोई राशि का भुगतान कर सकता है और "अदेयता प्रमाण पत्र" प्राप्त कर सकता है और हाइपोस्टैसिस पर आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने का लाभ उठा सकता है कि अब और कुछ नहीं किया जाना बाकी है। जिस सामूहिक हित के लिए न्यायालय संरक्षक है, वह कार्यवाही को वापस लेने की अनुमति देने के लिए मूक या मूक दर्शक नहीं हो सकता है, या उस मामले के लिए संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत या संहिता की खंड 482 के तहत अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने और कार्यवाही को अपास्त करने के लिए अभियुक्त व्यक्तियों की सरल निपुणता को स्वीकार नहीं कर सकता है। यह कानूनी रूप से स्वीकार्य नहीं है। उम्मीद की जाती है कि न्यायालय इस तरह के कुशल कदमों से सावधान रहेगा। हम विनम्रतापूर्वक याद दिलाते हैं कि उच्च न्यायालय को इस मामले को इस बात को ध्यान में रखते हुए निपटना चाहिए था कि इस तरह के मुकदमों में अभियुक्त जब सफलता की एक छोटी सी झलक महसूस करता है, तो आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने के लिए सहज रूप से निहित अधिकार क्षेत्र क्षेत्र का आह्वान करता है। न्यायालय का प्रमुख कर्तव्य, उस समय, आरोपों के जोर और समझौते के सार का पता लगाने के लिए पूरे तथ्यों की जांच करना होना चाहिए। यह न्यायाधीश का अनुभव उसकी सहायता के लिए आता है और उक्त अनुभव का उपयोग सतर्कता, सावधानी, सावधानी और साहसी विवेक के साथ किया जाना चाहिए। जैसा कि हम मामले में पाते हैं कि

विद्वान एकल न्यायाधीश ने तथ्यों के पूरे परिप्रेक्ष्य की उचित परिप्रेक्ष्य में जांच करने के लिए बहुत मेहनत नहीं की है और आपराधिक कार्यवाही को अपास्त कर दिया है। उक्त निरस्तीकरण न तो न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने में मदद करता है और न ही यह न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकता है और न ही यह कहा जा सकता है कि चूंकि कोई समझौता है, इसलिए कोई सबूत रिकॉर्ड पर नहीं आएगा और दोषसिद्धि की बहुत कम संभावना होगी। हमारे विचार में इस तरह के निष्कर्ष को दर्ज करना मुश्किल होगा। जो भी हो, तथ्य यह है कि सामाजिक हित खतरे में होगा और इन परिस्थितियों में अभियोजन एजेंसी को पूरे मामले के लिए एक विदेशी के रूप में नहीं माना जा सकता है। इसलिए, हमारे पास यह मानने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं है कि उच्च न्यायालय का आदेश पूरी तरह से अक्षम्य है।

24. नतीजतन, अपील स्वीकार की जाती है, और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को अपास्त किया जाता है और यह निर्देश दिया जाता है कि विचारण कानून के अनुसार आगे किया जायेगा। हम यह जोड़ सकते हैं कि वर्तमान अपील में हमारी टिप्पणियां पूरी तरह से आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने के आदेश की न्यायसंगतता पर निर्णय लेने के संदर्भ में हैं और विचारण के समय इसका कोई असर नहीं होगा। और हम इसे स्पष्ट करते हैं।

अपील स्वीकार की गई।

(1) (2008) 4 एससीसी 582

(2) (2009) 6 एससीसी 364

(3) (1996) 5 एससीसी 591

(4) (2008) 9 एससीसी 677

(5) (2009) 6 एससीसी 351

(6) (2012) 10 एससीसी 303

(7) 2014 (4) स्केल 195

(8) एआईआर 2012 एससीडब्ल्यू 5333

(9) 2013 (14) स्केल 235

(10) 2014 3 स्केल 137

(11) 2014 4 स्केल 659

(12) (2013) 10 एससीसी 686

यह अनुवाद आर्टिफ़िश्यल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" की सहायता से अनुवादक अधिवक्ता विनायक कुमार जोशी द्वारा किया गया है ।

अस्वीकरण- इस निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और अधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।

*****